हिमाचल प्रदेश में संस्थागत संगीत शिक्षा का स्वरुप

रितु शर्मा
संगीत विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला

संगीत

भारतवर्ष में संगीत विधा अति प्राचीनकाल से लेकर किसी न किसी रुप में समाज का एक महत्वपूर्ण अंग रही है। भारतीय संगीत के इतिहास को चार भागों में विभक्त किया गया है–

(क) अति प्राचीन काल (वैदिक काल) 200 ई0 पूर्व से 1000 ई0 पूर्व तक।
(ख) प्राचीनकाल (1000 ई0 पूर्व से सन् 800 ई0 तक)
(ग) मध्यकाल (मुस्लिम काल) 800 ई0 पूर्व से 1800 ई0 तक।
(घ) आधुनिक काल 1800 ई0 से वर्तमान तक।

अति प्राचीन काल से संगीत का प्रचार था। इसका प्रमाण हमें वेदों में मिलता है। वेद चार हैं, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद। इन चारों वेदों में से केवल सामवेद संगीतमय था। दूसरे तीन वेदों में केवल मन्त्रों का पाठ ही किया जाता था। माना जाता है कि सामवेद में पहले केवल तीन स्वरों का ही प्रयोग होता था जिनको उदात, अनुदात और स्वरित कहते थे। उस समय इन्ही तीन स्वरों का शिक्षण–प्रशिक्षण होता था। वैदिक काल में ही सामगान सप्त स्वरों में होने लगा इसका प्रमाण ''पाणिनी शिक्षा तथा नारदीय शिक्षा''[1] में निम्नलिखित श्लोक में मिलता है

''उदाते निषाद गांधारो अनुदाते ऋषभ धैवतो।
स्वरित प्रथवा हाते षड़ज मध्यम पंचमा।''[2]

अर्थात

उदात	अनुदात	स्वरित
नि ग	रे ध	सा म प

समय परिवर्तन के साथ–साथ संगीत के क्षेत्र में भी परिवर्तन होता चला गया। मतंग के काल तक संगीत दो भागों में विभक्त हो गया। एक मार्गी संगीत कहा जाने लगा दूसरा देशी संगीत। मार्गी संगीत का संबद्ध ईश्वर आराधना से था तथा देशी संगीत जन मनोरंजन के लिए था। उस समय मार्गी तथा देशी संगीत सामिक व लौकिक संगीत के रुप में भी जाना जाता था। मतंग कृत बृहदेशी ग्रंथ में देशी रागों की व्याख्या की गई है। भरत कृत नाट्य ाास्त्र के छः अध्याय (20 से 32 तक) संगीत की शिक्षा से संबद्ध रखते है। मार्गी संगीत के नियम कठोर होते थे जबकि देशी संगीत के नियम इतने कठिन नहीं होते वे तभी उस संगीत का सामान्य लोग आनन्द प्राप्त करते थे। ''भरत ने 28वें अध्याय में गान्धर्व का उल्लेख किया है। भरत ने गान्धर्व को साम से उद्भत ही माना है। गान्धर्व अगर साम से उद्भत है तो यह मानना असंगत नही होगा कि साम के अतिरिक्त समस्त गान भेद जो शिक्षा के समय तक लोक में प्रचलित रहा है और जिसे लौकिक कहा गया है भरत ने उसे ही सुसम्बद्ध कर गान्धर्व रुप में स्थित है।''[3]

आधुनिक समय तक भी मार्गी तथा देशी संगीत दोनों ही रुपों में चलता आ रहा है। आधुनिक समय में ऐसा देखा गया है कि युवा वर्ग शास्त्रीय संगीत को पसन्द कर रहे हैं, कुछ उप–शास्त्रीय संगीत

1 भारतीय संगीत का इतिहास, परांजये।
2 भारतीय संगीत का इतिहास, भगवत शरण शर्मा।
3 स्वर और रागों के विकास में वाद्यों का योगदान, डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती, पृ.–39.40।

जैसे गीत, गज़ल, भजन, ठुमरी तथा फिल्मी संगीत ही पसन्द करते हैं। इस तरह यह कहा जा सकता है कि जो आधुनिक शास्त्रीय संगीत है वह मार्गी संगीत माना जा सकता है तथा उप–शास्त्रीय संगीत को देशी संगीत कहा जा सकता है।

संगीत का स्वरुप

सर्वविदित है कि संगीत एक ललित कला है। एक ऐसी ललित कला जिसमें अपने मनोभावों को स्वर, लय तथा ताल के माध्यम से प्रकट किया जाता है, संगीत रस और भाव की अभिव्यक्ति में अत्यन्त सहायक है। कहा भी गया है, ''गीतं, वाद्य तथा नृत्यं त्रयम् संगीत मुच्यते।''[1]

कल्लिनाथ ने भी संगीत रत्नाकर का टीका करते हुए संगीत शब्द से गायन, वादन और नृत्य इन तीनों का अर्थ ग्रहण किया है अर्थात गायन को तो संगीत कहा जाता है परन्तु जहां केवल वादन या नृत्य का प्रदर्शन होता है वहां भी संगीत शब्द ही प्रयुक्त होता है। इन तीनों में गायन को ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसका कारण है कि गायन में स्वर ताल लय रस साहित्य जैसे सूक्ष्म घटकों को गायक अपने कंठ के माध्यम से स्थूल रुप प्रदान करता है। इसके पश्चात् वादन माना जाता है जिसमें मनुष्य स्वर, लय, ताल और रस को किसी वाद्य के माध्यम से स्थूल रुप प्रदान करता है अर्थात अपने मनोभावों को किसी अन्य माध्यम द्वारा प्रकट करता है। अन्ततः नृत्य की श्रेणी मानी गई है जिसमें नर्तक स्वर, लय, ताल के साथ अपने विभिन्न अंगो, उपागों का संचालन करता हुआ अभिनय करता है। नृत्य, गायन, वादन पर आश्रित है अतः गायन, वादन और नृत्य तीनों को संगीत कहा जाता है। संगीत विद्या वास्तव में एक साधना है, जिसमें प्रतिभा और संस्कार के साथ–साथ बहुत बड़े त्याग तप और परिश्रम की आवश्यकता पड़ती है। किसी भी व्यक्ति में संगीत के प्रति कितना भी अच्छा संस्कार हो क्यों न हो किन्तु सुशिक्षा एवं अभ्यास के बिना वह सफल संगीतज्ञ नही बन सकता।

भारत में विद्यालय शिक्षा के रुप में सर्वप्रथम विद्यालय की स्थापना

भारतवर्ष में सर्वप्रथम बड़ौदा में सन् 1886 ई. में मौलाबख्श तथा पं. आदित्य राम दोनों ने सामूहिक रुप से संगीत शिक्षा देने का प्रयास किया था। भारतवर्ष में सर्वप्रथम संगीत विद्यालय के रुप में 5 मई 1901 ई. को लाहौर का गान्धर्व महाविद्यालय स्थापित हुआ। जिसकी स्थापना पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी द्वारा की गई थी। सर्वप्रथम विद्यालय शिक्षा के रुप में शिक्षण इसी महाविद्यालय से शुरु हुआ।

संगीत शिक्षा के उदेश्य

डॉ. वी. आर. आठवाले ने संगीत शिक्षा के उदेश्य के संबद्ध में यह विचार व्यक्त किए है। ''संगीत शिक्षा का मतलब अनुकरण नहीं, बल्कि व्यक्तित्व का मुक्त विकास करना तथा स्वतंत्र विचार के लिए उद्यत करना संगीत शिक्षा का उदेश्य है।''[2] प्रसिद्ध शास्त्रीय संगीतज्ञ एवं शिक्षाविद् विनयचन्द्र भौदगिल्य का मत है कि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर सामूहिक गान शिक्षा को पाठ्यक्रम में समाविष्ट करना अपेक्षित है क्योंकि बच्चों में स्वभावत्: ही सामूहिक गान के प्रति रुचि होती है। ऐसे कार्यक्रम बच्चों में अनुशासन, एकता प्रेम, मैत्री उत्साह आदि व्यक्तिगत के गुणों को विकसित करने में सशक्त माध्यम है। पन्नालाल मदान ने संगीत शिक्षा के उदेश्य की चर्चा करते हुए कहा है कि

1 संगीत रत्नाकर–शारंग देव विरचित, अध्याय श्लोक, 2।
2 संगीत का समाज शास्त्र, सत्यवती शर्मा, पृ0–112

''इससे सौन्दर्यानुभूति की क्षमता का विकास, हृदय की ग्रहयता का आन्तिरिक विकास अतीन्द्रिय सुख व शान्ति की प्राप्ति, निर्विकार, संयम की शक्ति, विचारों उसे भावोत्पादकता, रचना शक्ति का प्रकाशन, सभ्यता एवं संस्कृति का संरक्षण, विश्वबनधुत्व की भावना का विकास आदि होने से बालक का व्यक्तित्व निखरता है।''[1] संगीत के माध्यम से बालक में शिक्षा के प्रति रुचि उत्पन्न की जा सकती है। इसी कारण 'मैडम माण्टेसरी फाविल' आदि अनेक शिक्षाविदों ने शिशुओं की शिक्षा में संगीत को अनिवार्य स्थान दिया।

अकादमिक शिक्षा में संगीत का एक विषय के रुप में अवतरण

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त समस्त देश में संगीत का प्रचार प्रसार बढ़ता गया, सरकार ने प्रत्येक प्रान्त में संगीत के विद्यालय खोले तथा अन्य सामान्य विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में भी संगीत की ऐच्छिक विषय के रुप में मान्यता दी गई। इससे से हमारा प्रान्त हिमाचल प्रदेश भी अलग नही रहा। हिमाचल प्रदेश में जहां संगीत के क्षेत्र में उन्नति हुई वहीं शिक्षा के क्षेत्र में संगीत में भी कई उपलब्धियों के मध्यनज़र संगीत विषय को विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों आदि में पाठ्यक्रम की तरहा पढ़ाया जाने लगा। अतः यह कहना पूर्णतः तार्किक है कि पहले जहां संगीत का शिक्षण प्रशिक्षण गुरु–शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही हुआ करता था, लेकिन अब आधुनिक समय में संगीत शिक्षा अकादमिक शिक्षा के रुप में पूर्णतया स्थापित हो चुकी है।

हिमाचल प्रदेश में विद्यालय स्तर पर संगीत की स्थिति

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में ललित कलाओं को एक प्रतिष्ठित स्थान दिया गया है। प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक संगीत शिक्षा की प्रयोजनीयता के अर्थ को समझते हुए संगीत को एक महत्वपूर्ण विषय के रुप में स्वीकार किया गया है। शिक्षण संस्थाओं में संगीत को जहां एक विषय के रुप में मान्यता दी गई है, वहां विद्यार्थियों को यह भी पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई है कि वे स्वेच्छा से गायन, वादन, नृत्य में से किसी का भी शिक्षण प्राप्त करने हेतु चयन कर सकते है। संगीत की तीनों कलाओं गायन, वादन तथा नृत्य ने अपने–अपने क्षेत्र में पृथक–पृथक स्थान अर्जित किए है तथा इन तीनों को स्वतन्त्र कलाओं के रुप में ग्रहण किया जाने लगा है। जिसके फलस्वरुप संगीत ने मान्यता प्राप्त विषय होने के साथ–साथ राष्ट्र के सांस्कृतिक जीवन में भी एक महत्वपूर्ण स्थान अर्जित कर लिया है। हिमाचल प्रदेश में संगीत को बढ़ावा देने कर श्रेय निजी विद्यालयों को भी जाता है। निजी विद्यालयों में बच्चों को नर्सरी से ही किसी न किसी सांस्कृतिक कार्यक्रम में भाग करवाया जाता है। जिससे बच्चों में संगीत का कोई न कोई गुण देखने को मिलता है। आज विद्यालयों में कोई भी कार्यक्रम संगीत के बिना नही होता। आज 15 अगस्त 26 जनवरी इत्यादि महत्वपूर्ण दिनों के सांस्कृतिक कार्यक्रम में बच्चों का पूर्ण सहयोग रहता है। इसी के चलते आज हिमाचल प्रदेश के अधिकतर विद्यालयों में संगीत शिक्षण शुरु किया गया है।

हिमाचल प्रदेश में विद्यालय स्तर पर परीक्षा संचालन

हिमाचल प्रदेश के वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालयों में दो प्रकार की परीक्षाएं प्रचलित है। 11वीं के लिए आन्तिरिक परीक्षाएं विद्यालय द्वारा सत्र के अन्तर्गत छात्र प्रगति के मूल्यांकन हेतु समय–समय पर संचालित की जाती है। बाह्य परीक्षाएं हिमाचल प्रदेश शिक्षा बोर्ड द्वारा ली जाती है और इसके परिणाम के आधार पर छात्र को उतीर्ण या अनुतीर्ण घोषित किया जाता है।

1 संगीत का समाज शास्त्र, सत्यवती शर्मा, पृ0–115

महाविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षण

महाविद्यालय स्तर, शिक्षा का वह स्तर है जहां से विद्यार्थी उच्च ज्ञान प्राप्त कर, अपने एक विषय का चुनाव करता है। जिसे वह स्नातकोतर के लिए चुनता है। महाविद्यालय स्तर पर आकर विद्यार्थी अपनी प्रतिभा एवं लक्ष्य की दृष्टि से विषयों का चुनाव करता है। शिक्षा के क्षेत्र में आए अभूतपूर्व परिवर्तन से इस अनुसंधान की विषय वस्तु 'संगीत' भी अछूता नही रहा है। हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से सम्बन्धित महाविद्यालयों में कार्यरत संगीत विभाग वर्तमान में विद्यार्थी वर्ग के एक बड़े हिस्से को अपनी तरफ आकर्षित कर पाने में सफल हुए है। काफी तादात में विद्यार्थी अब संगीत विषय को अपनी स्नातक की पढ़ाई में ऐच्छिक विषय के रुप में लेने लगे है। जिससे समाज में भी संगीत एक विषय के रुप में स्वीकार्य हुआ है।

वर्तमान में सरकारी तथा निजी क्षेत्र के लगभग 85 महाविद्यालय, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से सम्बन्धित है जिनमें से 75 महाविद्यालयों में संगीत विभाग सफलतापूर्वक कार्य कर रहे है तथा शिक्षार्थियों को उच्चकोटी की शिक्षा प्रदान कर रहें है। हालांकि विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित किए जाने वाले युवा समारोहों अथवा महाविद्यालयों द्वारा अपने स्तर पर आयोजित की जाने वाली संगीत प्रतियोगिताओं में लगभग सभी महाविद्यालयों की किसी न किसी रुप में भागीदारी रहती है। लेकिन फिर भी जिन महाविद्यालयों में संगीत विभाग कार्यरत है, उनकी प्रस्तुतियों का स्तर कमोवेश बेहतर रहता है। जिससे संगीत विभाग की महता अपने आप सिद्ध होती है।

महाविद्यालय स्तर पर निर्धारित पाठ्यक्रम

महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थी संगीत की आधारभूत कुशलताओं से केवल परिचित ही नही अपितु उसमें कुशलता प्राप्त करने योग्य होते है इन्हे स्वर, लय, ताल, सप्तक, नाद की उंचाई निचाई, स्वरलिपि, लय की गति आदि का प्रारंभिक ज्ञान हो जाता है। हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आने वाले कॉलेजों का संगीत विषय का पाठ्यक्रम बहुत ही सूझ–बूझ से तैयार किया जाता है। संगीत सम्बन्धी आधारभूत कुशलताओं के उपरान्त इस स्तर पर गायन वादन प्रारम्भ किया जाता है जैसे राग में आलाप, बढ़त आदि करना। महाविद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रम में बहुत अधिक राग न रखकर एक कक्षा में आधारभूत तथा सरल रागों का अच्छी तरह अभ्यास कराया जाता है। अन्त में हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय द्वारा जारी महाविद्यालय स्तर का पाठ्यक्रम दिया गया है जो कि दो भागों में बांटा गया है जिसमें पहला कियात्मक पक्ष तथा दूसरा शास्त्र पक्ष निर्धारित किया गया है जो विद्यार्थी के मानसिक स्तर के अनुकूल है तथा शिक्षार्थियों में संगीत के प्रति सौन्दर्यानुभूति का विकास करता है।

भारत में विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षण हेतु सर्वप्रथम विश्वविद्यालय की स्थापना

हमारा देश एक लम्बे समय तक विदेशियों के हाथों गुलाम रह चुका है। स्वतन्त्रता से पहले भारत में स्वतन्त्र रुप से शिक्षा का बहुत कम प्रचार था। सन् 1947 के पश्चात् भारत में बहुत से शिक्षण संस्थाओं जैसे विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षा संस्थाओं की स्थापना होनी आरम्भ हुई। हर विषय पृथक रुप से निष्णात उपाधि देने के उदेश्य से विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई, जिसका एक लक्ष्य तो स्वतन्त्र रुप से एक विषय में पारंगतता हासिल करना था और सार्वजनिक रुप से हर नागरिक हर विषय की शिक्षा ग्रहण कर सके, अथवा दे सके इत्यादि के लिए इसे विश्वविद्यालयों में सथापित

करना था। विश्वविद्यालयों में संकायों के स्थापित हो जाने के पश्चात्, हर विषय में निष्णात् और शोध करने की सुविधा का प्रावधान किया गया।

आज भारत के अधिकतर विश्वविद्यालयों में संगीत की उच्च शिक्षा की सुविधा उपलब्ध है। स्नातक, स्नातकोतर और शोध कक्षाओं का प्रावधान है। सबसे पहले भारत में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में संगीत का उच्च शिक्षण आरम्भ हुआ जिसमें छात्रों को शिक्षण के साथ साथ डिग्री की उपलब्धता का भी प्रावधान हुआ। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में संगीत एवं ललित कला संकाय की स्थापना हुई इसकी संचालक डॉ. एनी बेसेन्ट थी। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक पंडित मदन मोहप मालवीय जी संगीत को एक विषय के रुप में आरम्भ करना चाहते थे। इस सम्बन्ध में उन्होने भातखण्डे जी तथा पुलस्कर जी द्वारा बताए गए पाठ्यक्रम और शिक्षण प्रणाली के आधार पर बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षण आरम्भ हुआ।

इस प्रकार उस समय से आज तक के अन्तराल में लगभग समस्त भारत के विश्वविद्यालयों में संगीत को एक पाठ्य विषय के रुप में स्थान मिला, इसका उदेश्य संगीत का घराना परम्परा से निकाल कर जन–जन को सुलभ करवाना था। सामान्यतः प्राचीन समय में संगीत का शिक्षण केवल घरानों तक ही सीमित था। अतः शास्त्र पक्ष से अछूता रह जाना स्वाभाविक ही था। विश्वविद्यालय शिक्षण में सैद्धान्तिक पक्ष को प्रयोगात्मक पक्ष के सामानान्तर लाया गया है। संगीत एक ललित कला होने के साथ–साथ इसके इतिहास और इसकी वैज्ञानिकता इत्यादि के ज्ञान को सर्वत्र फैलाने के उदेश्य से भी विश्वविद्यालयों में संगीत विषय को आरम्भ करने का एक उदेश्य एक विशेष वर्ग या समुदाय के चंगुल से निकालना भी था। और आज इसमें बहुत परिवर्तन भी हुआ है। विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत विषय को हर सुविधा प्रदान की गई है तथा समय–समय पर इसमें समय के अनुकूल परिवर्तन किया जाता रहा है।

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में संगीत विषय का शिक्षण

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में संगीत विभाग की स्थापना 1972 को हुई तब से लेकर आज तक हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के संगीत विभाग ने सदैव सबका ध्यान केन्द्रित किया है। इसी के चलते हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षण की स्थिति उच्च स्तर की है। समय–समय पर विश्वविद्यालय द्वारा समय की आवश्यकतानुसार शिक्षा की गुणवता की ओर विशेष ध्यान दिया जाता रहा है। विभाग द्वारा कई सफल संगीत विद्यार्थियों को एम.ए., एम.फिल. तथा पीएच.डी. की उपाधि प्रदान की जा चुकी है।

परिसर में कोई भी सांस्कृतिक गतिविधि इस विभाग की सहायता के बिना सम्पन्न नही होती। संगीत विभाग के छात्र हमेशा आकर्षण का केन्द्र रहे है। कोई भी कार्यक्रम होने पर विभाग के सभी सदस्य एकजुट होकर विद्यार्थियों को तैयार करवा कर कार्यक्रम में अपनी सांस्कृतिक भागीदारी दर्ज़ करवाते है। संगीत विभाग के विद्यार्थियों ने संगीत के विभिन्न क्षेत्रों, युवा उत्सवों तथा अन्य प्रतियोगिताओं में राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कार प्राप्त कर हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय की गरीमा को जहां उज्जवल किया है वहीं दूसरी ओर विभाग के शिक्षकों व छात्रों ने रेडियों तथा दूरदर्शन के अनेकों कार्यक्रमों में भाग लेकर सराहनीय कार्य किया है।

प्रायः देखा गया है कि हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय स्तर पर आने वाला विद्यार्थी निश्चित रुप से अपने भविष्यगत लक्ष्य का निर्धारण कर चुका होता है और हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में आकर और गुरुजनों के पूर्ण सहयोग से वह अपनी दिशा निर्धारित करता है और अपना लक्ष्य प्राप्त करता है। हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में संगीत की उपाधि प्राप्त कर चुके कई छात्र आज समाज में कुशल संगीत शिक्षक के रुप में उभरे है यह सब विश्वविद्यालय की देन है।

हिमाचल प्रदेश विशविद्यालय में कला निष्णात संगीत का पाठ्यक्रम

विश्वविद्यालय प्रशासन द्वारा नियुक्त 'बोर्ड ऑफ स्टडीज़' में हर विषय के लिए सोच विचार किया जाता है तथा इसमें ही विषय विशेषज्ञों द्वारा पाठ्यक्रम तैयार किया जाता है। कोर्स के अन्तर्गत इतना पाठ्यक्रम तैयार या रखा जाता है जो विषय के साथ–साथ पूर्णतयः ठीक बैठता है। अवधि और पाठ्यक्रम को इस तरह जोड़ा जाता है ताकि समय का सदुपयोग हो।

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षण की तकनीक

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के संगीत विभाग में संगीत का उच्च शिक्षण होता है जिसमें एम0ए0, एम0फिल0 तथा पीएच0डी0 की उपाधि के पाठ्यक्रम की सुविधा भी उपलब्ध रहती है। आधुनिक समय में संगीत शिक्षण के साथ–साथ संगीत छात्रों के बौद्धिक विकास और संगीत विषय में उसको पारंगत बनाने के उदेश्य से कई बातों को एक साथ मिलाकर शिक्षण व प्रशिक्षण दिया जाता है। विश्वविद्यालयों में प्रयुक्त होने वाली शिक्षण की तकनीक में जिन विधियों का उपयोग होता है वह निम्न है–

- पाठ्यक्रम को आधार मानकर
- भाषण विधि
- प्रदर्शन विधि
- सेमिनार अथवा संगोष्ठि
- सम्मेलन
- गोष्ठी
- परियोजना विधि

1. पाठ्यक्रम को आधार मानकर

किसी भी विषय के शिक्षण के लिए सर्वप्रथम एक रुपरेखा तैयार की जाती है तथा उसके अन्तर्गत पाठ्यक्रम को व्यवहारिकता, सृजनात्मकताऔर कल्पना शक्ति के आधार पर मूल्यांकित करके एक श्रृंखला के रुप में पढ़ाने के लिए दिया जाता है। विद्यार्थियों की रुची का भी ध्यान इस पाठ्यक्रम को बनाते समय रखा जाता है। विषय का विशलेषण, लक्ष्य की पहचान तथा लेखन सामग्री के प्रत्यक्ष प्रयोग की सम्पूर्ण सम्भावनांए इसमें रखी गई होती है।

2. भाषण विधि

विश्वविद्यालयों में सैद्धान्तिक पक्ष को आधार मानकर विकसित हुई पद्धति भाषण विधि है। इस प्रकिया द्वारा आधारभूत नियमों का विकास होता है। विश्वविद्यालयों या उच्च कक्षाओं में शिक्षण के लिए ये सबसे उपयुक्त है। भाषण में शिक्षण का प्रयास सर्वथा छात्रों को पूर्णतया आश्वस्त करना होता है।

3. प्रदर्शन विधि

संगीत सामान्य पाठ्य विषय होने के साथ ही ललित कला भी है इसका अवलोकन प्रदर्शन द्वारा ही किया जाता है अतः सैद्धान्तिक पक्ष को भाषण द्वारा तथा क्रियात्मक पक्ष को को प्रदर्शन द्वारा प्रदर्शित करके समझाया जाता है। विद्यार्थियों को भी शिक्षक द्वारा किए गए प्रदर्शन का अनुकरण करके उसे पूर्णतः ग्रहण करना होता है। विद्यार्थियों पर दृष्टि रखना भी आवश्यक होता है क्योंकि विद्यार्थी प्रदर्शन द्वारा किए गए पाठ को ग्रहण कर रहें है या नही कुछ जगहा तो सैद्धान्ति पक्ष में भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है, परन्तु क्रियात्मक को सपष्ट करने हेतु प्रदर्शन विधि सर्वोपरि है।

4. सेमिनार अथवा संगोष्ठी

विश्वविद्यालयों के शिक्षण में संगीत के अतिरिक्त अन्य विषयों में भी सेमिनार का आयोजन करवाया जाता है। शिक्षण का उदेश्य बौधिक विकरस को प्रतिबिम्बित करना है। विश्वविद्यालयों द्वारा आयोजित सेमिनारों में बाहर से आए हुए विशेषज्ञ अध्यापक तथा आयोजक विश्वविद्यालय के सेमिनार विशेष में भाग ले रहे अध्यापक विषय विशेष के विभिन्न पहलुओं पर बोलते है तथा सामूहिक वार्तालाप भी करवाते है। यह एक अतयन्त ही लाभदायक विधि है विषयों की सुक्षमताओं का ज्ञान इससे ही होता है। प्रश्नोतर आदि का भी इसमें समय दिया जाता है। पहले इसमें किसी शोध पत्र का पठन–पाठन होता है तथा इसके बाद सामूहिक वाद–विवाद होता है जिसमें समस्या के हर पहलू पर पूर्णरुपेण विचार किया जाता है। इसमें ग्राह्यता और प्रभाव को मुख्य लक्ष्य समझा जाता है। सेमिनार की कार्यकारिणी के पांच सदस्य होते है, अध्यक्ष, निर्देशक, वक्ता, अवलोकक या प्रेक्षक।

5. सम्मेलन

संगीत विषय में सम्मेलन शब्द का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन समय में तो सम्मेलन संगीत का अंग ही था। सम्मेलन में एक समय में श्रोताओं की संख्या कम से कम पचास से लेकर हज़ारों तक हो सकती है। इसमें मुख्यतः प्रदर्शन अंग को लेकर ही कार्य आरम्भ होता है तथा इसमें कुछ विख्यात लोगों को बुलाया जाता है फिर उनसे गायन–वादन करवाया जाता है इस दौरान प्रश्नोतर भी हो सकते है परन्तु इनका मुख्य उदेश्य कला की सिद्धि और सार्थकता को स्पष्ट करना ही होता है।

6. गोष्ठी

विश्वविद्यालयों में गोष्ठी अथवा वाद–विवाद द्वारा भी शिक्षण दिया जाता है। ये निर्देशन पर आधारित होती है तथा इसका मुख्य उदेश्य एक समस्या को लेकर उस पर विचार करना होता है। इसमें हर पक्ष के अपने विचार होते है तथा इन्हे तर्क की कसौटी पर मापा जाता है। सबकी सहमति से निकला हुआ विचार निष्कर्ष के रुप में प्रस्तुत किया जाता है।

7. परियोजना विधि

इसमें छात्रों को किसी समस्या को अथवा किसी नई बात को लेकर उसमें संभावित सारे पहलुओं को सपष्ट करना होता है। समस्या का समाधान निकालना भी छात्र पर निर्भर होता है। इसमें पुस्तकालय, चिन्हावली तथा कई अन्य विधियां प्रयोग में लाई जाती है। ये केवल शिक्षक के निर्देशन में होती है। इसका उपयोगिता और समाधान दोनो नियमों पर केन्द्रित होना आवश्यक है।